बच्चों की आज़ादी कितनी?

नसीम अख्तर

"मैम आपका नाम क्या है?"

"नसीम।"

आज से करीब डेढ़ वर्ष पहले मैं एक प्राथमिक विद्यालय की कक्षा तीसरी में पढ़ाती थी। इसी कक्षा के एक बच्चे का यह प्रश्न था जिसका मैंने सीधा-सा उत्तर दे दिया।

दूसरे दिन उसी कक्षा के एक बच्चे ने मुस्कुराते हुए मुझसे कहा, "मैम, मैंने आपको मन्दिर के पास देखा था।"

मैंने कहा, "हाँ, बड़े शिव मन्दिर के पास मेरा घर है।"

इसके कुछ दिनों बाद मैं बच्चों को अँग्रेज़ी का एक पाठ पढ़ा रही थी। पाठ योजना के अनुसार, उस दिन बच्चों को कहानी का केवल एक ही भाग सुनाना था। लेकिन कहानी का वो भाग ऐसे मोड़ पर छोड़ा गया था कि बच्चे आगे की कहानी सुनने के लिए उत्सुक हो रहे थे और उन्होंने आगे की कहानी सुनाने की ज़िद की। मैंने उनकी ज़िद को मान लिया और

चित्र: शितेन्द्र ठाकुर

उन्हें पूरी कहानी सुना दी (जो कि उनके पाठ्यक्रम में ही थी)।

ये तीनों घटनाएँ सुनने में बेहद साधारण हैं लेकिन इन घटनाओं का उस विद्यालय की शिक्षिकाओं और प्राचार्या के लिए बहुत महत्व था। हुआ यह कि इन घटनाओं के कुछ दिनों बाद मुझे प्राचार्या ने अपने कमरे में बुलाया। मेरी इन गलतियों के बारे में किसी शिक्षिका ने प्राचार्या से शिकायत कर दी थी और उस दिन मुझे जवाबदेही के लिए बुलाया गया था। मुझे ये तथाकथित गलतियाँ करने का ज़िम्मेदार ठहराते हुए और आगे से बच्चों को अनुशासन में रखने का निर्देश देते हुए प्राचार्या ने कहा कि "बच्चों की इतनी हिम्मत नहीं होनी चाहिए कि वे आपसे व्यक्तिगत सवाल पूछ सकें। आप बच्चों से कुछ दूरी बनाकर रखिए। अगर कोई बच्चा स्कूल में खिलौने लाता है तो वो आप मेरे पास लाइए, मैं उसके अभिभावकों से उसकी शिकायत करूँगी और उसे कोई दण्ड दूँगी।"

ये घटनाएँ मेरे मन में आज भी ताज़ा हैं और अक्सर मन में सवाल उठता है कि मैं सही थी या वो प्राचार्या? आप में से तो बहुत-से बच्चों को पढ़ाते हैं एवं शिक्षा से जुड़े हैं - आपको क्या लगता है? अपनी राय 'संदर्भ' को ज़रूर लिख भेजिए।

नसीम अख्तर: अँग्रेज़ी साहित्य में स्नातकोत्तर। वर्तमान में चिराग संस्था, नैनीताल की फैलोशिप पर एकलव्य, भोपाल के साथ काम कर रहीं हैं।